शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 अक्टूबर 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

हिन्दी लघुकथा में दलित चेतना

विजया त्रिवेदी (शोधार्थी)
डॉ. पुरूषोत्तम दुबे (निर्देशक)
भाषा अध्ययनशाला
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

हिन्दी लघुकथा लेखन में जिस प्रकार आठवें दशक में तेजी आई है, इसी प्रकार दलित चेतना की लघुकथाएँ भी पर्याप्त संख्या में लिखी जाने लगी हैं। महाराष्ट्र से प्रारंभ हुआ दलित लेखन आज देश की लगभग सभी भाषाओं में प्रमुखता से विमर्श के केंद्र में है। हिंदी में दलित लेखन की चर्चा अनेकानेक प्रकार से होती रही है। संवेदना के स्तर पर यह भी विमर्श हुआ कि गैर दलित का दलितों के बारे में लिखना कभी-कभी वायवीय हो जाता है। कविता, कहानी, उपन्यास के साथ-साथ लघु कथाओं में भी दलित विमर्श के स्वर सुनाई देते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में हिंदी लघु कथा में दलित चेतना पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

डॉ. रामकुमार घोटड द्वारा सम्पादित पुस्तक 'दलित समाज की लघुकथाएँ हिंदी साहित्य में दलित चिंतन के लिए सामग्री उपलब्ध कराती है। उन्होंने लघुकथाओं में दलित चिंतन पर समग्र अध्ययन किया है। उनका मत है कि साहित्य की विभिन्न विधाओं में भी दलित चिंतन गायब है। उसकी उपस्थित दर्ज नहीं है। दलित विमर्श की लघुकथाओं में दलितों के दमन और अपमान के विभिन्न रूप तो मिलते ही हैं, साथ ही दलित पात्रों में स्वाभिमान और संघर्ष का उभरता स्वर भी सुनाई पड़ता है। दलित केन्द्रित लघुकथाओं में स्पष्ट होता है कि दलित अपनी सामाजिक स्वीकृति और सम्मान के प्रति सजग है और यही दलितों की पहली सामाजिक जरूरत भी है। उनके साथ धर्म और जाति के नाम पर दोयम दर्जे का व्यवहार किया गया।

लघुकथाओं में दलित चेतना

दलित और गैर दलित लेखकों द्वारा दलित-समाज के पक्ष में लिखी जाने वाली लघुकथाएँ बहुआयामी हैं। ये लघुकथाएँ हाशिए पर रह रहे समाज के उत्पीड़न और शोषण को आमजन के समक्ष रखती है। दलित लघुकथाकारों द्वारा लिखी लघुकथाओं में दलित वर्ग की स्थिति को लेकर आक्रोश व्यक्त हुआ है। लेकिन यह आक्रोश समाज के अन्य वर्गों पर प्रत्याक्रमण की तरह नहीं है। इस संदर्भ में डॉ. रामकुमार घोटड का कहना है, "यहाँ आक्रोश है, लेकिन यह आक्रोश प्रत्याक्रमण या हिंसा में परिणित न होकर पाठक मन को दुष्प्रवृतियों के खिलाफ खड़ा करता है।"

हिन्दी लघुकथा लेखन के क्षेत्र में दलित वर्ग से आये प्रमुख लघुकथाकारों में पूरनसिंह कालीचरण प्रेमी, रतनकुमार सांभरिया, ओमप्रकाश कश्यप, जगदीश कश्यप, नन्दलाल भारती आदि आते हैं।

रतनकुमार सांभरिया द्वारा लिखित लघुकथा 'द्रोणाचार्य जिन्दा है' एक दलित के आत्मोत्थान की प्रक्रिया पर परदा डालती है। एक सवर्ण शिक्षक जिसका स्वयं का बेटा भी उसी कक्षा में सम्मिलित होता है, जिस कक्षा की परीक्षा उसी के बेटे के साथ पढ़ने वाला दलित विद्यार्थी भी देता है। उत्तरपुस्तिका के मूल्यांकन में दलित के बेटे को सर्वाधिक अंक प्राप्त होते हैं जो सवर्ण शिक्षक को खटकते हैं। उसके बेटे की तुलना में दलित बेटा आगे बढ़े यह शिक्षक के लिए असहनीय है। फलस्वरूप ईर्ष्यावश उस दलित की समस्त उत्तरपुस्तिकाओं का पुनर्मूल्यांकन करता है और उसे अनुत्तीर्ण कर देता है।

दलित साहित्यकार इतना श्रम कर रहे हैं, इसके पीछे एक चेतना काम कर रही है। वही चेतना मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक आधारों पर खड़ी होकर आह्वान करती है। दलित साहित्य भारतीय मानदंडों के आधार पर भारतीय सामजिक विसंगितियों के अध्ययन का मार्ग प्रश्स्त करता है।

दलित चेतना से जुड़कर हिन्दी लघुकथा के क्षेत्रों में दलित वर्ग से आए लेखकों के अतिरिक्त अन्य वर्ग से आए लेखकों की अधिकाधिक उपस्थिति मिलती है। जिनमें डॉ. अशोक भाटिया, आनंद बिलघरे, डॉ. कमल चोपड़ा, प्रतापसिंह सोढ़ी, बलराम, माधवनागदा, विक्रमम सोनी, डॉ. सतीश दुबे आदि लघुकथाकारों के नाम सामने आते हैं।

लघुकथाकार बलराम की 'माध्यम', कलराम अग्रवाल की 'रामभरोसे', मालती बसंत की 'अदला बदली', विक्रम सोनी की 'बनैले सुअर', सतीश दुबे की 'रीढ़' इत्यादि लघुकथाओं में दलित वर्ग के प्रति समाज के आमानवीय व्यवहार के विरूद्ध स्वर मुखरित हुए हैं। काले हाशिए पर डाल दिए गए समाज की इन लघुकथाओं में जातिवाद डाल दिए गया। समाज की इन लघुकथाओं में जातिवाद की काली सुरंगे हैं, जिनमें यातना की काली परछाईयाँ है, यहाँ तिरस्कार और अभिशाप के अंगारे हैं, किल्लत और जिल्लत और में जीने वाले संतप्त समाज की घुटन है, जो मुक्ति पथ की तलाश में है।"

दलित लघुकथा लेखन के क्षेत्र में लघुकथाकार प्रतापसिंह सोढ़ी की लघुकथा 'शक्ति बिखर गई' रचना विचारणीय है। सवर्ण लड़की अपने हरिजन प्रेमी के समक्ष दृढ़तापूर्वक जात-पात भी मानती है और परजाति में शादी को न मानने की बात भी करती है। लड़का अंत मे स्पष्ट करता है, मैं हरिजन जाति का हूँ और जाति के इसी तूफ़ान में मुझे ध्वस्त कर मेरी शक्ति को बिखेर दिया है।" इस सत्य को भारत के दो हजार वर्षों के सामाजिक इतिहास पर लागू करके कुछ निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

सामाजिक विमर्श का आधार है 'दलित साहित्य'। हिन्दी साहित्य के अध्यापन-अध्ययन में एकांगी दृष्टि के समावेश के कारण सबसे बड़ी विडंबना यह रही है कि हिन्दी क्षेत्र में वैष्णव भक्ति के साहित्य को ही ऊंचा स्थान दिया गया, जिससे भक्ति के माध्यम से ऐसा मनोविज्ञान विकसित होता चला गया, जिससे वैयक्तिक स्तर से लेकर सामुदायिक स्तर से होता हुआ सामाजिक स्तर से होता हुआ सामाजिक स्तर तक समर्पण करने को प्रोत्साहन मिलता चला गया। प्रत्येक मनुष्य की चेतना उस हर परिस्थिति के विरूद्ध होने में बाधक बनती है।

"दलित शब्द दबाए गए, शोषित, पीड़ित प्रताड़ित के अर्थों के साथ जब साहित्य में जुड़ता है तो विरोध की ओर संकेत करता है वह विरोध चाहे व्यवस्था का हो सामाजिक विसंगतियों या

धार्मिक रूढ़ियो या वर्ण व्यवस्था से उपजे जातिभेद का विरोध है।" यह दलित साहित्य की प्रमुख चेतना भी है और उसका मूल स्वर भी।

निष्कर्ष

दलित विमर्श के क्षेत्र में हिन्दी में काफी लघुकथाएँ लिखी गई हैं, उनमे दमन और शोषण का कोरा चित्रण न होकर उसके पीछे छिपे आक्रोश, स्वाभिमान और न्याय की तड़प को वाणी दी गई है। इन रचनाओं में दलित अपनी सामाजिक स्वीकृति, सम्मान और बराबरी के लिए संघर्ष करते दिखाई दिए है, जो पाठक की चेतना को प्रभावित करते हैं। डॉ. अशोक भाटिया के मतानुसार "साम्प्रदायिक समस्या के धर्मगत और जातिगत दोनों के आयामों को हिन्दी लघुकथाओं में सूक्ष्मता से उकेरा गया है। धर्मगत साम्प्रदायिकता की समस्याओं को संकीर्णता और सदाशयता दोनों आयामों के रूप में उभारा गया है।"

संदर्भ ग्रंथ

1. समकालीन हिन्दी लघुकथा, डॉ. अशोक भाटिया, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला, पृष्ठ 100

2. रत्नकुमार सांभरिया, फ्लेप मेटर, दलित समाज की लघुकथाएँ, सम्पादक डॉ. रामकुमार घोटड़

3. दलित साहित्य के आधर तत्व, हरपाल सिंह 'अरूष' पृष्ठ 132

4. दलित समाज, साहित्य और ये लघुकथाएँ डॉ. अशोक भाटिया, दलित समाज की लघुकथाएँ सम्पादक डॉ.. राजकुमार घोटड़, पृष्ठ 17

5. दलित साहित्य के आधार तत्व, हरपालसिंह 'अरूष', पृष्ठ 111

6. ओमप्रकाश वाल्मीकि, 'शिखर की ओर', पृष्ठ 402

7. समकालीन हिन्दी लघुकथा, डॉ. अशोक भाटिया, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला, पृष्ठ 234